वो नज़रिया

माधव केलकर

किसी भी परिवार में बच्चे की पैदाइश के साथ उस परिवार की ज़िम्मेदारियों में इज़ाफा हो जाता है। यदि पैदा हुआ बच्चा शारीरिक या मानसिक रूप से चैलेंज्ड हो तब तो बच्चे की परवरिश में बहुत सारे विशेष प्रयास करने पड़ते हैं क्योंकि हमारे आसपास की समस्त व्यवस्थाएँ, साजो-सामान, किताबें, लेखन सामग्री वगैरह सामान्य इन्सानों को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। इस सामान्यीकरण की वजह से शारीरिक या मानसिक रूप से चैलेंज्ड बच्चों की अनदेखी हो जाती है। ऐसे किसी बच्चे की शिक्षा में कौन-सी चुनौतियाँ आती हैं और ऐसे बच्चे का सामाजीकरण (सोशलाइज़ेशन) किस तरह हो पाता है, ऐसी ही कुछ बातों को रेखांकित करने की कोशिश की गई है इस संस्मरण में।

मेरी बड़ी बहन भारती का कुछ महीनों पहले निधन हुआ। वो सेरीब्रल पाल्सी की मरीज़ थी। किसी सामान्य इन्सान की तरह चलना, बोलना, हाथों से काम करना उसके लिए सम्भव नहीं हो पाता था। अक्सर हमारे घर पहली बार आने वाले परिचितों द्वारा या जब हम लोग किसी सार्वजनिक कार्यक्रम में बहन को लेकर जाते थे तब हमसे एक सवाल जो यकीनी तौर पर पूछा जाता था, वह था, "भारती खुद से क्या कर पाती हैं?"

हमारा एक-जैसा ही जवाब होता था, "वो अपना कोई भी काम खुद से नहीं कर पाती।" और फिर एक सहानुभूति की लहर दौड़ जाती थी। इस सवाल या सहानुभूति में गलत कुछ भी नहीं है। एक इन्सान को लेकर जिज्ञासा है और एक इन्सान के प्रति द्रवित भावनाएँ हैं।

जब हम एक सामान्य इन्सान के रूप में जीवन जीते हैं तो जीवन में कुछ तयशुदा पड़ाव होते हैं। मसलन, बचपन में पाँच साल के होते-होते शाला में दाखिला होना, फिर दसवीं-बारहवीं बोर्ड, फिर कॉलेज में दाखिला आदि। लेकिन जब आप एक असामान्य जीवन जी रहे होते हैं तो आपके जीवन में ये पड़ाव इतने सरल रेखीय रूप में नहीं आते हैं। मेरी बहन के जीवन में भी शाला का पड़ाव काफी कठिनाइयों के बाद ही आया।

यहाँ मैं अपनी बहन के शाला सम्बन्धी कुछ अनुभव बाँटना चाहता हूँ।

पढ़ाई का वो सिलसिला

पाँच साल का होते-होते जब मैंने स्कूल जाना शुरू किया था तो बहन भी ज़िद करती थी कि उसे भी स्कूल जाना है। ज़िद बोलकर नहीं, कन्धे पर बस्ता लटकाने का इशारा करके करती थी। उस समय उसे भी एक स्लेट, पेंसिल, कॉपी-किताब वगैरह लाकर दी गई थी। जब मैं पढ़ने बैठता था तो उसका भी बस्ता लेकर उसे साथ बिठाता था। वह भी स्लेट पर कुछ लिखने की कोशिश करती थी, अपनी किताब को वो मुश्किल से खोल पाती थी और किसी वाक्य या पैराग्राफ पर अंगुली रखकर मुझसे पूछती, "का?" मतलब 'यह क्या लिखा है'। इस तरह उसके साथ पढ़ने-लिखने का कुछ सिलसिला शुरू हुआ।

हम सबको ऐसा महसूस होता था कि स्कूल में और बच्चों के साथ बैठकर भारती को लाभ मिलेगा। घर के पास एक प्राथमिक शाला थी, वहाँ पूछताछ करने पर हैडमास्टर ने कहा, "एक हफ्ता बैठाकर देखिए।" फिर भारती रोज़ दो घण्टे के लिए स्कूल जाने लगी। एक हफ्ते बाद हैडमास्टर ने बताया कि "आपकी बच्ची ने हम लोगों को परेशान नहीं किया लेकिन गाहे-बगाहे हमारी कक्षा डिस्टर्ब होने लगती है। भारती बच्चों के लिए कौतूहल का केन्द्र बन जाती है। बच्चे उसके काफी करीब तक पहुँच जाते हैं, उसे छूकर देखना चाहते हैं, कोई उससे बात करता है, कोई टिफिन में से कुछ खिलाना चाहता है, कोई पीठ पर बैठना चाहता है, कोई उसकी चोटी गूँथना चाहता है। इसकी वजह से उसकी सुरक्षा हमारे लिए एक चिन्ता का सबब है। इसलिए हम और रिस्क नहीं लेना चाहते।" उन्होंने यह सलाह भी दी कि ऐसे बच्चों के लिए सामान्य शालाओं की बजाय स्पेशल स्कूल बेहतर रहते हैं।

तो, एक हफ्ते तक शाला जाने के बाद यह सिलसिला टूट गया। हमारे शहर में एक-दो अन्ध-मूक-बधिर शालाएँ थीं। उन शालाओं में आने वाले बच्चे भले ही अन्ध-मूक-बधिर हों लेकिन शारीरिक रूप से सामान्य होते थे। इसलिए साइन लैंग्विज, ब्रेल लिपि या सामान्य लेखन सीखकर वे शिक्षा की मुख्यधारा में

परीक्षा देना, परीक्षा पास करना जैसे पड़ाव पार करने की कोशिश कर पाते थे। लेकिन सेरीब्रल पाल्सी, डाउन सिंड्रोम वगैरह के मरीज़ बच्चों को इन शालाओं में दाखिला नहीं दिया जाता था। दूसरी समस्या थी कि मूक-बधिर शालाएँ घर से काफी दूर थीं।

तो, एक बार फिर 'घर का बच्चा घर में ही अच्छा' हो गया। लेकिन बहन के साथ किताबें पढ़ना, अखबार-पत्रिकाएँ दिखाना, कभी-कभी कहानी सुनाना, बारहखड़ी बुलवाना (जिसमें से वो कुछ बोल पाती थी), एक से दस तक गिनती बुलवाने की कोशिश करना (जिसमें वो दो, चार, पाँच और दस बोल पाती थी तथा एक, चार, पाँच अंगुलियाँ दिखा सकती थी) जारी रहा।

कुछ काम जिसमें उसकी मदद सम्भव थी, उसमें मदद लेते थे। उदाहरण के लिए, एक बाल्टी में साबुन का पानी बनाकर बाल्टी उसके पास रखे दें और कुछ कपड़े उसे दे दिए जाएँ तो वह उन कपड़ों को धीरे-धीरे साबुन के पानी में डुबो देती थी। कपड़े धोना तो उसके लिए सम्भव नहीं था। ऐसे ही, सब्ज़ी की टोकरी में आलू या प्याज़ रखना, कुकर की चार सीटी हो जाने पर माँ को गैस बन्द करने की याद दिलवाना, धुले कपड़े नियत जगह पर रखना वगैरह।

नई उम्मीद, नया नज़रिया

खैर, बड़ी बहन के लिए स्कूल की उम्मीद काफी बरसों बाद आई।

बात शायद तब की है जब मैं 16-17 बरस का रहा होऊँगा। स्कूल से लौटते समय तेज़ बारिश शुरू हुई और मैंने सड़क के किनारे की अधबनी इमारत में शरण ले ली। इमारत काफी हद तक बन चुकी थी। भीतर एक बोर्ड रखा था – स्नेह निकेतन विशेष विद्यालय। इस बोर्ड को देखकर मेरी आँखों में चमक आ गई।

मैंने अन्दर जाकर एक मैडम से पूछताछ की कि "क्या इस शाला में सभी तरह के विकलांग बच्चों को दाखिला मिलेगा?" (क्षमा करें उस समय विशेष

सक्षम बच्चे या दिव्यांग या सी.डब्लू.एस.एन. जैसे शब्द बोलचाल में नहीं थे।)

मैडम ने मुझसे पूछा, "क्या आपके घर पर भी कोई ऐसा बच्चा है?"

मैंने बताया, "जी, मेरी बड़ी बहन है।" तब तक एक अन्य मैडम वहाँ आ गई थीं। उन्होंने मुझे कुर्सी पर बिठाकर पूछा, "क्या हुआ है तुम्हारी बहन को?"

मैंने थोड़ा सकुचाते हुए बताया, "जी, वह पैदाइश से ही चल, बोल नहीं सकती। उसे सेरीब्रल पाल्सी बताया था डॉक्टर ने।"

बड़ी मैडम ने मुझसे पूछा, "क्या तुम्हारी दीदी बिलकुल भी कोई काम नहीं कर पाती?"

मैंने फिर अपना पहले का जवाब दोहराया, "वह सामान्य लोगों की तरह बोल नहीं पाती, चल नहीं पाती, हाथों से काम नहीं कर पाती। हाँ, बहुत हँसती और रोती है।"

बड़ी मैडम ने कहा, "दो-तीन महीने में यह स्कूल शुरू हो जाएगा। दो-तीन दिन बाद तुम अपनी माँ के साथ आना। हो सके तो बड़ी बहन को भी लेकर आना। लेकिन जब आप लोग आओगे तब यह सोचकर आना कि बड़ी बहन क्या-क्या कर पाती है। क्या नहीं कर पाती है, इस पर हम कोई बात नहीं करेंगे।"

बारिश रुकने के बाद घर आया और मैंने कहा, "भारती के लिए एक स्कूल है।" फिर पूरा वाकया बताया। और वह आखिरी बात भी कि बहन क्या-क्या कर पाती है, यह सोचकर जाना है।

माँ-पिता और मैं इस नए नज़रिये को पकड़कर बहन को साथ लेकर बैठे। माँ ने कहा, "चलो, भारती जो-जो कर पाती है, हम उसकी एक लिस्ट बनाते हैं।"

पहले हम सोचने लगे कि पढ़ने-लिखने में वो क्या कर पाती है। अक्षर, शब्द, गिनती, लिखना उसके लिए सम्भव नहीं था लेकिन कुछ अक्षर, शब्द और संख्याएँ वो बोल पाती थी। यह सब सोचते हुए थोड़ी निराशा हाथ लगी।

जब आसपास के परिवेश को ध्यान में रखकर सोचना शुरू किया तो मानो खज़ाना हाथ लग गया। भारती अपने सभी प्रमुख रिश्तेदारों को नाम से पहचानती थी, कौन भाई है, कौन दीदी, कौन काका, मौसी, नानी, दादी, मामा-मामी... सभी को पहचानती थी। पास-पड़ोस के अंकल-आंटी को भी पहचानती थी। भाई को भाऊ-भैया-दादा, बहन को ताई-दी..दी, इसी तरह काका, कुकू, मा..मा, आत्या (बुआ)। कुछ 60-70 शब्दों और कुछ इशारों से खुद को अभिव्यक्त कर पाना, उसे बखूबी आता था।

सब्ज़ियों में वह आलू, प्याज़, टमाटर, मिर्च, भिण्डी, लौकी, कद्दू, पालक, करेला पहचान लेती थी। कभी भी उससे कहा जाए कि टोकरी में से आलू निकालकर दो तो वह आलू ही उठाती थी।

फलों में आम, केला, सीताफल, सन्तरा, सेब, अंगूर पहचानती थी। कच्चा आम खाना टालती थी। इशारे से बताती थी कि खट्टा है।

गेहूँ, चावल, दाल को पहचानती थी। दाल-चावल खाते समय घी की कटोरी की ओर इशारा करती थी कि उसे दाल-चावल घी डालकर दिया जाए।

गरम चाय या दूध को फूँककर ठण्डा करने की कोशिश करती थी।

रोटी, चावल, दाल, सब्ज़ी, घी, तेल, भजिए, कढ़ी, चटनी, अचार, लड्डू, चिवड़ा, चकली सभी कुछ पहचानती थी और चाव से खाती भी थी। यदि दाल-सब्ज़ी में नमक कम हो तो बता पाती थी और तीखी हो गई हो तो वह भी इशारे से बता देती थी।

कपड़े धोने के साबुन और नहाने के साबुन को भी पहचान लेती थी।

कपड़ों में साड़ी, ब्लाउज़, पेंट, शर्ट, अंडरवियर, ब्रेसियर, बनियान, पजामा पहचान लेती थी। यदि किसी मैग्ज़ीन में पेंट-शर्ट पहनी महिला दिखाई दे तो वह मुँह पर हाथ रखकर ऑऑऑ (शेम शेम) करती थी। इसी तरह स्लीवलेस ब्लाउज़ या स्लीवलेस कुर्ते वाली महिला की तस्वीर देखकर भी ऑऑऑ करती थी। पुरुषों के अंडरवियर-बनियान के विज्ञापन देखकर मुँह फेर लेती थी। सिनेमा में लव सीन आने पर आँखों पर हाथ रखकर माँ को बताती कि उसने आँख बन्द कर ली है।

जब हम यह सब सूचीबद्ध कर रहे थे तो पिताजी ने कहा, "ये 18-19 साल की लड़की है। पारम्परिक रूप से शिक्षा-दीक्षा न भी हो सकी हो, लेकिन बिलकुल कुछ न जानती हो, ऐसा भी नहीं है। कुछ तो जानती है, समझती है, बताने की कोशिश करती है। फिर भी हम यही कहते हैं कि इसे कुछ नहीं आता।" पहली बार हमने इस बदले हुए नज़रिये से भारती को देखा था। उसकी समझ या ज्ञान को स्वीकार भी किया था।

खैर, चन्द रोज़ बाद स्नेह निकेतन शाला जाना हुआ। साथ में भारती को भी ले गए थे। प्राचार्य मैडम से मुलाकात हुई। उन्होंने बहुत प्यार से भारती से बात की। माँ से भारती की निजी ज़रूरतों जैसे भोजन, पानी पीना, पेशाब, पाखाना, पीरियड्स आदि आदतों के बारे में कुछ सवाल किए। इन सब नित्यक्रियाओं को निपटाने में किसी आया की कितनी मदद चाहिए होगी, खुद से क्या कर लेगी जैसी जानकारियाँ लीं। उसे गुस्सा कब आता है, नाराज़गी

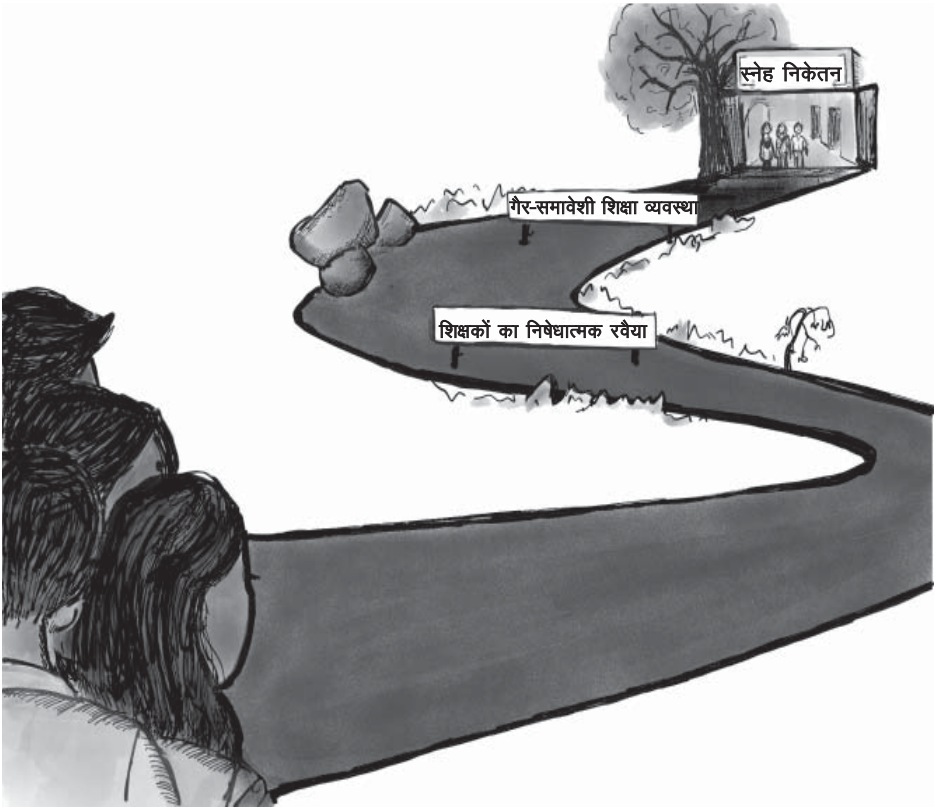

कैसे दिखाती है, क्या कभी आक्रामक भी हो जाती है, छोटे या बड़े बच्चों के साथ दोस्ती बनाने में कितनी सहज है, क्या उसे कोई दवाई वगैरह देते हैं जैसे सवाल भी उन्होंने किए।

स्कूल में दाखिला

कुछ दिनों बाद भारती का स्कूल जाने का सिलसिला शुरू हुआ। सुबह 9 बजे भारती के साथ सायकल रिक्शा में माँ या पिताजी जाते और स्कूल छोड़कर वापस आते थे। दोपहर 3 बजे एक बार फिर माँ स्कूल तक जाती थी और सायकल रिक्शा से भारती को लेकर घर वापसी होती थी।

हमारे पास-पड़ोस के परिचित भारती से पूछते थे कि "स्कूल अच्छा लग

रहा है?" तो भारती 'हाँ' कहती थी। "स्कूल में क्या करती हो," पूछने पर वह इशारे से बताती, "लिखती हूँ।" कभी कोई पूछता, "स्कूल में मार भी पड़ती होगी?" तो भारती तुरन्त इनकार करती और अगले ही पल हँसने लगती।

मैं भी बीच-बीच में उत्सुकतावश स्कूल जाकर देख आता कि बहन कक्षा में क्या कर रही है। कभी-कभी प्राचार्य मैडम से भी मुलाकात होती थी। एक बार उन्होंने मुझे पूरा स्कूल घुमाया था। बच्चों की पढ़ाई के लिए सामग्री, खेल की सामग्री, मेडिकल इमर्जेंसी की सामग्री, टीचर्स के साथ मिटिंग कक्ष, बच्चों के लिए बड़ा असेम्बली हॉल, बच्चों द्वारा बनाया गया क्राफ्ट वर्क वगैरह – सब कुछ सिलसिलेवार सहेजा गया था। इस शाला में बच्चों की शारीरिक क्षमताओं के हिसाब से कक्षाएँ बनाई गई थीं। जो बच्चे शारीरिक रूप से विशेष सक्षम थे, उनकी पारम्परिक कक्षाएँ होती थीं और वे बोर्ड परीक्षा वगैरह भी देते थे। मानसिक रूप से अक्षम बच्चों की कक्षाएँ अलग से लगती थीं। स्कूल में 6 साल से लेकर 25 साल के बच्चे को भी दाखिला दिया गया था।

बच्चों का आर्टवर्क देखकर कभी लगता ही नहीं था कि शारीरिक या मानसिक बाधाएँ सृजनशीलता का रास्ता रोक सकती हैं। हर बच्चे द्वारा बनाए गए चित्र, लिखे गए कागज़ को उसी बच्चे के नाम से बनी फाइल में रखा जाता था (जिसे हम आजकल पोर्टफोलियो कहते हैं)। कभी-कभी बच्चे स्कूल में आए विज़िटर या अपने माता-पिता या अपने सहपाठियों के माता-पिता को अपनी फाइल दिखाते भी थे। कई बच्चे मुझे भारती के भाई के रूप में पहचानते थे। एक बच्ची मेरी माँ को देखकर खुशी से चिल्लाने लगती थी, "भारती आई... भारती आई..." (मतलब भारती की माँ)। फिर वह माँ की गोद में बैठ जाती थी।

इस शाला में बच्चों को काफी सहजता से सारा दिन व्यस्त रखा जाता था। भारती की कक्षा की शुरुआत प्रार्थना व राष्ट्रगीत से होती थी, फिर कुछ भाषा, कुछ गणित, कहानी सुनना, हावभाव से गीत गाना, बीच में भोजन अवकाश और आधा घण्टा सोना। साथ ही, कुछ आर्ट-क्राफ्ट वर्क, कुछ खेलकूद, कभी कहानियों का नाट्य रूपान्तरण, कभी मिलकर कुछ खाने के लिए बनाना तो कभी बालमेला।

शाला की गतिविधियों के बारे में सब कुछ बता पाना शायद सम्भव नहीं होगा। लेकिन मैं कुछ छोटे-मोटे ब्यौरे देना चाहूँगा जिसका सम्बन्ध मेरी बहन से है।

जैसा मैंने बताया कि सभी बच्चों को उनकी क्षमता के मुताबिक सृजनशीलता दिखाने के मौके दिए जाते थे। मुझे याद है, भारती एक दिन स्कूल से बस्ते में एक ड्रॉइंगशीट का टुकड़ा रखकर लाई थी। उस ड्रॉइंगशीट पर एक पानी में

तैरती बतख बनाई गई थी। रंगीन क्रेयॉन की आउटलाइन और बीच के हिस्से में महीन रेत चिपकी हुई। नीचे लिखा था - बड़ी भारती (कक्षा में दो भारती थीं इसलिए एक बड़ी और एक छोटी)। हम सबने इसे देखा और सराहा भी। फिर बहन से ही 'हाँ-ना' शैली में सवाल पूछकर पता चला कि ड्रॉइंगशीट पर बतख किसी और बच्चे ने बनाई, उस पर गोंद किसी और बच्चे ने लगाकर दी, फिर उस गोंद लगी बतख पर भारती ने मुट्ठी में रेत लेकर गिराई। इस तरह मिलकर बनाई गई थी यह बतख।

एक और वाकया मुझे याद आता है, जब कछुए और खरगोश की चिरपरिचित कहानी का नाट्य रूपान्तरण किया जा रहा था। उस नाटक में भारती को कछुए का किरदार निभाना था। वह इस नाटक को लेकर काफी उत्साहित थी। हम लोग नाटक देखने गए थे। उसने कछुए का मुखौटा पहनकर तेज़ रेंगने की कोशिश की, फिर तय जगह पर सोते हुए खरगोश को पार कर रेस जीतने की खुशी का अभिनय भी किया।

परीक्षा और रिपोर्ट कार्ड

यदि परीक्षा और रिपोर्ट कार्ड की बात न करूँ तो बात शायद अधूरी रह जाएगी। इस शाला में शारीरिक रूप से विशेष सक्षम बच्चे जो पाँचवीं या आठवीं बोर्ड परीक्षा देना चाहते थे, उनके लिए सामान्य कक्षाएँ और अन्य हुनर सीखने के मौके होते थे। उन्हें वार्षिक परीक्षा भी देनी होती थी। सेरीब्रल पाल्सी या डाउन सिंड्रोम या अन्य मानसिक रोगों से जूझते बच्चों की कोई विशेष परीक्षा नहीं होती थी। इन बच्चों का सालभर का पोर्टफोलियो, व्यवहार, सूझबूझ और शिक्षकों के निरीक्षण ही इनके रिपोर्ट कार्ड के आधार होते थे।

जब शाला में भारती का पहला साल समाप्ति की ओर था तो एक सूचना मिली कि अमुक तारीख को भारती की कक्षा की परीक्षा होगी। फिर हमने उसको तारीख व परीक्षा के बारे में बताया। भारती ने कैलेंडर की ओर इशारा किया यानी कैलेंडर में परीक्षा की तारीख पर निशान लगा दिया जाए। परीक्षा के दिन उसने अपनी छाती पर हाथ रखकर माँ को बताने की कोशिश की कि परीक्षा के नाम से दिल तेज़ी-से धड़क रहा है।

खैर, परीक्षा के बाद रिज़ल्ट की घोषणा हुई। एक रिपोर्ट कार्ड दिया गया। वो रिपोर्ट कार्ड मेरे लिए या माता-पिता के लिए अनोखा था। हमने इससे पहले ऐसा कोई प्रगति पत्रक देखा ही नहीं था। प्रगति पत्रक का एक हिस्सा अकादमिक दक्षताओं से सम्बन्धित था। दूसरा हिस्सा बच्चे के व्यवहार और अन्य बच्चों के साथ किस तरह सामंजस्य बन पा रहा है, उसे लेकर था। बतौर नमूना मैं यहाँ उसे बताने की कोशिश कर रहा हूँ।

स्नेह निकेतन (सत्र 1980-81)

भाषा–

भारती कक्षा में सुनाई जाने वाली कहानियों को ध्यान से सुनती है। जो बात समझ में न आए, उसे 'का' कहकर पूछ लेती है।

कविताओं को बाकी बच्चों के साथ गाने की कोशिश करती है।

हिन्दी के कुछ स्वर और व्यंजन बोल पाती है। बाकी स्वर-व्यंजन के लिए कोशिश कर रही है।

किताबों, मैग्ज़ीन आदि के चित्र देखना पसन्द है। ध्यान से चित्रों को देखती है।

साथी बच्चों के साथ बातचीत की कोशिश करती है। 'हाँ' या 'ना' में जवाब देती है।

गणित–

भारती एक से दस तक की संख्याओं को बोलने की कोशिश करती है। अंगुलियों से 1, 4, 5, 10 संख्या बता सकती है।

वो गोल, त्रिकोन, चौकोन आकारों को पहचान लेती है। उसे एक टोकरी में दिए गए आकारों में से गोल अलग करने के लिए कहा जाए तो वह ऐसा कर लेती है।

रंगों को पहचानती है। लाल, पीला, नीला या हरा गुटका उठाकर दे सकती है।

भारती कम और ज़्यादा को बता पाती है। यदि किसी ढेर में पाँच बीज हों और दूसरे ढेर में 20 बीज हों तो वह कम-ज़्यादा बीजों की ढेरी को पहचानकर उस पर अंगुली रख सकती है।

घड़ी को देखकर समय का अन्दाज़ा लगाने की कोशिश करती है।

अन्य गतिविधियाँ–

इस साल भारती ने दो नाटकों में हिस्सा लिया। इसके अलावा हाट और दुकान गतिविधि में भारती ने एक स्टॉल में बैठकर भजिए बनाने और बेचने में अन्य बच्चों की मदद की।

कागज़ पर चित्र बनाए, चित्रों में क्रेयॉन से रंग भरे, ड्रॉइंग शीट पर बतख बनाई।

व्यवहार-स्वभाव और साथियों के साथ सामंजस्य–

सत्र की शुरुआत में भारती थोड़े शर्मीले स्वभाव की थी। लेकिन धीरे-धीरे उसकी कक्षा के सभी बच्चों से जान-पहचान हो गई। वह सहपाठियों को भैया या दीदी कहकर पुकारती है, जो स्वाभाविक भी है क्योंकि वह सहपाठियों को नाम से नहीं पुकार पाती। हालाँकि, वह सहपाठियों के नाम जानती है। कभी उससे पूछा जाए कि नितिन कहाँ है तो वह नितिन की ओर इशारा करती है।

- बच्चों के साथ सामूहिक गतिविधि में जोश के साथ शामिल होती है।
- अपने लंच बॉक्स में से दूसरे बच्चों को खाना लेने के लिए कहती है।
- यदि कोई सहपाठी रो रहा हो तो भारती उसे चुप कराने की कोशिश करती है।

आगामी सत्र के लिए शुभकामनाएँ।

- कक्षा शिक्षिका

हम सबको इस रिपोर्ट कार्ड को देखकर हैरानी हो रही थी। क्या ऐसा भी कोई प्रगति पत्रक हो सकता है जो बिना अंक, बिना ग्रेड, बिना रैंक का हो? बच्चा क्या नहीं कर सकता, इस पर एक भी टिप्पणी नहीं। कक्षा में अन्य बच्चों के साथ तुलना का एक भी वाक्य नहीं। अगले साल के लिए बच्चे की अकादमिक क्षमताओं या व्यवहार में सुधार के लिए एक भी सुझाव न दिया गया हो!!

उस समय मेरे परिवार में सभी लोग आश्चर्य चकित थे। मेरे पिताजी ने कहा, "भारती धीरे-धीरे शाला के माहौल में ढलने लगी है। इसे इसी रूप में लेना चाहिए। हम लोग घर पर सीखने के अन्य तरीकों को करके नहीं देख पाए। शाला में ऐसे संसाधन भी हैं और दक्ष शिक्षक भी।" हमने भारती के रिज़ल्ट पर खुशी मनाई। भारती की मौजूदगी में आसपास के सभी लोगों को बताया गया कि हमारी भारती पास हो गई है।

कुछ परिचितों ने पूछा भी कि "भारती अगले साल भी स्कूल जाओगी न?"

भारती ने सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

भारती स्कूल जाती रहे, हमारा यह कमिटमेंट बना रहा। भारती लगभग आठ साल तक स्नेह निकेतन की विद्यार्थी बनी रही।

हर साल पिछले साल से फर्क रिपोर्ट कार्ड आता था। कक्षा वही होती थी। कुछ नए बच्चे स्कूल आ जाते और कुछ पहले के बच्चे आना बन्द कर देते थे।

हालाँकि, स्कूल जाने की वजह से भारती पेंसिल पकड़कर लिखने लगी हो या फर्राटे से पढ़ने लगी हो, ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। ऐसा होना हमारे लिए अपेक्षित भी नहीं था।

इस स्कूल में जाकर मेरी बहन के जीवन में कुछ बदलाव तो पक्के तौर पर आए। मसलन, अनजान लोगों के सामने आने से कतराना कम हो गया, शर्मीलापन भी कम हुआ, बहुत ज़ोर देकर मना करना या सहमति देना उसे आ गया, माता-पिता के सिवा अन्य लोगों के सानिध्य में भी वह सुरक्षित है, यह अहसास बना (शुरुआती एक साल के बाद वो अन्य बच्चों के साथ वैन में स्कूल जाने लगी थी), अन्य बच्चों के साथ मिलकर काम करना, दोस्ती बनाना जैसी बातें भी वह करने लगी थी। वो स्कूल उसके जीवन में ढेर सारी खुशियाँ लेकर आया था, वो स्कूल घर की एकरस दिनचर्या में उसके लिए बदलाव के कुछ पल लाया था।

* * *

भारती के स्कूल जाना बन्द होने के बाद भी अक्सर स्कूल की बातें हो ही जाती थीं और उसके चेहरे पर चमक आ जाती। वह कई बार कुछ काम सहजता से करती थी और इशारे से यह भी एहसास करवाती थी कि यह स्कूल में बताया या सिखाया गया था।

यदा-कदा स्नेह निकेतन की शिक्षिकाओं से मुलाकात होती तो वे भी भारती के बारे में पूछती थीं। हम भी घर आकर बताते थे कि आज अमुक मैडम से मुलाकात हुई, वे तुम्हारे बारे में पूछ रही थीं। भारती उत्सुकता से पूछती, "का?" (मतलब क्या बात हुई)। कभी भारती को लेकर बाज़ार जाते हुए हम स्नेह निकेतन शाला के सामने से गुज़रते तो ऑटो या रिक्शा धीमा करवाकर उसे उसका स्कूल दिखाते थे। चूँकि भारती के जीवन में स्कूल के बाद का पड़ाव आया ही नहीं, तो शाला की यादें ही रह जाती हैं।

मैं आज भी अक्सर स्नेह निकेतन स्कूल के सामने से गुज़रते हुए सोचता हूँ कि कहने को तो स्कूल घर से दो-तीन किलोमीटर ही दूर था, लेकिन वहाँ तक पहुँच पाना भी कहाँ आसान था।

माधव केलकर: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

आभार: इस लेख के लिए पुरानी यादों को ताज़ा करने में मेरे माता-पिता ने भरपूर मदद की।

सभी चित्र: बंसी: जूनागढ़ की रहने वाली बंसी ने गांधीनगर से दाँतों की शल्य चिकित्सा की पढ़ाई करने के बाद TISS, मुम्बई से प्रारम्भिक शिक्षा में एम.ए. की पढ़ाई की। वह एक चित्रकार बनना चाहती हैं और संवेदनशील और अर्थपूर्ण बाल साहित्य की रचना करना चाहती हैं - खासकर गुजरात की गैर-अधिसूचित और 'बोली' भाषाओं में। वर्तमान में *एकलव्य*, भोपाल के साथ बाल साहित्य सृजन में जुड़ी हैं।